1
श्रीमद्भगवद्गीतोक्त आहार विमर्श

डॉ. सुरेन्द्र महतो
सहायक आचार्य, शिक्षापीठ,
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।
mahto@slbsrsv.ac.in

युक्ताहारविहारस्य ..... *यहाँ दुःख निवृत्तिके उपाय के रूप में समुचित दिनचर्या के महत्त्व पर बल दिया गया है। जिसके अन्तर्गत आहार, विहारादि दैनिक क्रिया को उजागर किया है। ये क्रियाएँ सामान्य रूप से प्राणीमात्र में देखी जाती हैं। कहा भी गया है-"आहार निद्राभय मैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्"। इस तरह आहार-निद्रादि सभी नितान्त जैविक आवश्यकताएँ (extreme biological needs) हैं।जिसके बिना जीवन असम्भव सा है। इन सभी में आहार का स्थान सर्वप्रमुख है। 'आह्रियते इति आहारः' अर्थात् जिसे ग्रहण (भोजन) किया जाए, अथवा खाने योग्य होने से आहार के रूप में प्रसिद्ध है। जिसका वर्णन सभी प्रकार के भारतीय वाङ्मय में विस्तार से किया गया है। विशेषकर संस्कृत ग्रन्थों वेद-उपनिषद आयुर्वेदादि प्रमुख हैं। इसी तरह श्रीमद्भगवद्गीता जो भारतीय वाङ्मय में विशिष्ट स्थान रखता है। इन में भी आहार की आवश्यकता, प्रकार एवं मात्रा के विषय में वर्णन किया गया है। जिसके अन्तर्गत त्रिगुण सम्बद्ध आहार के प्रकार -सात्विक, राजस एवं तामस प्रधानगुण युक्त भोज्य के परिणामों का उदाहरण सहित व्याख्या की गयी है। जिसे अपनाकर व्यक्ति (साधक) अपने भौतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति को प्राप्त कर सकता है। गीतोक्त आहार पद्धति के द्वारा व्यक्ति आत्म कल्याण एवं विश्व कल्याणपरक चिन्तन को विकसित कर सकता है। इस आलेख में गीता के तथ्यों को अन्य शास्त्रीय सन्दर्भों द्वारा परिपुष्ट करने का यथा सम्भव प्रयत्न किया गया है।*

मुख्यशब्द - आहार, गुण, अन्न, सत्व, रज, तम, मोक्ष युक्त व्यवहार, स्मृतिः मेधा, अध्यात्म भोग, मधुर, अम्ल, लवण कटु, कषाय आदि।

©Indira Gandhi National Open University

जीवेम शरदः शतम्[1]- इस श्रुति वाक्य के अनुसार भारतीय संस्कृति में मनुष्य शतायु होने की आकांक्षारखता है।मनुष्य का जीवन समुचित आहार और व्यवहार (दिनचर्या) पर निर्भर करता है। सर्व प्रथम जीवमात्र को जीवित रहने के लिए आहार की आवश्यकता पड़ती है जिसके लिए वे सदैव एक स्थान से दूसरे स्थान, एवं एक दूसरे से सान्निध्य स्थापित करता है। विशेष रूप से मनुष्य सभी जीवों में श्रेष्ठ होने के कारण वे जीवन जीने के साथ-साथ उसमें उत्कर्ष की भावना भी होती है। मनुष्य अपने भौतिक विकास के साथ आध्यात्मिक उन्नति को भी प्राप्त करना चाहता है। व्यक्ति समाज में रहते हुए सामाजिक गुणों को कभी भी नहीं छोड़ सकता। व्यक्ति का जीवन-मन, बुद्धि और कर्म से विशेष रूप से सम्बन्धित होता है। इन सभी क्रियाओं को समुचितढंग से सम्पादित करने के लिए समुचित आहार की आवश्यकता होती है। आहार के कई भेदोपभेदों की चर्चा आहार विज्ञान (आयुर्वेद) में की गई है। व्यक्ति का व्यवहार आहार पर निर्भर करता है। व्यवहार, मन और इन्द्रिय के संयोग का परिणाम होता है। मन-तन में स्थित होता है मन और तन के सम्यक् सञ्चालन में अन्न (आहार) की भूमिका अहं होती है। श्रीमद्भगवद्गीता में अन्न (आहार) के प्रकार एवं मात्रा की विशद् चर्चा विभिन्न प्रसंगों एवं अध्यायों में की गयी है।

उद्देश्य -

(1) श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन करना

(2) श्रीमद्भगवद्गीतामें आहार संबंधित पद्यों का संकलन करना

(3)श्रीमद्भगवद्गीतामें आहार संबंधित पद्यों काविश्लेषण करना

(4)श्रीमद्भगवद्गीतामें आहार संबंधित पद्यों कानिर्देशों का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सातत्य स्थापित करना

विधि - गुणात्मकशोध विधि में विषयवस्तु विश्लेषण का उपयोग किया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता आचार्य वेदव्यास द्वारा रचित महाभारत महाकाव्य के भीष्मपर्व के अध्याय -25 से 42 तक का अंश है। इस प्रकार इस में कुल 18 अध्यायों में 700 पद्य हैं। जो मुख्यरूप से ज्ञान, कर्म और भक्ति योग के विषय में व्यक्ति के भौतिक और आध्यात्मिक कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है। यह ग्रन्थ भारतीय वाङ्मय का प्रतिनिधि ग्रन्थ है। सुना जाता है कि इसका अनुवाद विश्व की अनेकों भाषाओं में हुआ है साथ ही इसकी हजारों भाष्य अर्थात् व्याख्याएँ भारतीय मनीषियों ने की हैं।इन व्याख्याओं में शांकर भाष्य सबसे

[1]यजुर्वेद 36/24

©Indira Gandhi National Open University

प्रसिद्ध माना जाता है। जिसका प्रकाशन विभिन्न प्रकाशकों ने किया है। इस विमर्श में गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित श्रीमद्भगवद्गीता शांकर भाष्य हिन्दी अनुवाद सहित का तेईसवाँ संस्करण सं. 2058 का उपयोग किया गया है।

श्रीमद्भगवदीता के प्रत्येक अध्याय के अन्त में ब्रह्मविद्या, उपनिषद् एवं योग शब्द का प्रयोग किया गया है। सिर्फ ग्यारहवें अध्याय को छोड़ कर सभी अध्याय एकविशेष योग के नाम से सम्बोधित है। उदाहरण स्वरूप प्रथम अध्याय अर्जुन विषाद योग,2 सांख्य, 3 कर्म, 4 ज्ञान, कर्म और सन्यास, 5 कर्मसन्यास, 6 ध्यान, 7 ज्ञानविज्ञान, 8 तारकब्रह्म, 9 राजविद्या, राजगुह्य, 10 विभूति, 11 विश्वरुपदर्शन, 12 भक्तियोग, 13 क्षेत्रक्षेत्रज्ञ, 14 गुणत्रयविभाग, 15 पुरूषोत्तम, 16 दैवासुरविभाग, 17 श्रद्धात्रय विभाग एवं 18 मोक्षसन्यास योग। योग शब्द प्रायः तन, मन और आत्मा के संयोग द्वारा अन्तिमसत्य-ब्रह्म-मोक्ष, तद्भाव अथवा ब्रह्मानन्द (Self-Actualization or Self Realization) की प्राप्ति से सम्बन्धित है। गीता में मुख्यरूप से तीन योग अर्थात् ज्ञान कर्म एवं भक्ति के माध्यम से मोक्ष अथवा ब्रह्मानन्द की प्राप्ति की बात कही गयी है। इनके प्रमुख विद्वानों में शंकराचार्य, रामानुज एवं विवेकाननद ज्ञान योग, विवेकानन्द, तिलक, अरविन्द, श्रीकृष्णप्रेम, गाँधी एवं विनोबाभावे कर्मयोग तथा रामानुजाचार्य मध्वाचार्य एवं चैतन्य महाप्रभुने भक्ति योग की प्रधानता देते हुए इन मार्गो से मोक्ष प्राप्ति को सुगम बताया है। तन (शरीर) में मन स्थित होता है। शरीर को धर्म (कर्म) का मुख्य साधन बताया[2]गया है। शरीर (तन) को रोगों का घर कहा गया है।[3] प्रसिद्ध कहावत है - पहला सुख निरोगी कायाअर्थात् शारीरिक रूप से स्वस्थ होना परम आवश्यक है। स्वस्थ शरीर के लिए समुचित आहार-व्यवहार[4]की आवश्यकता सभी शास्त्रों सहित गीता में भी उद्धृत है। काश्यप संहिता में आरोग्य को आहार के अधीन[5] बताया गया है। आयुर्वेद के विभिन्न ग्रन्थों में आहार के विषय में विस्तृत चर्चा है जिसका मुख्य ध्येय है शरीर को स्वस्थ रखना। क्योंकि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का विकास होता है और स्वस्थ मस्तिष्क में कल्याणकारी विचार उत्पन्न होते हैं।

गोस्वामी तुलसी दास इस शरीर को पाँच तत्त्वों[6] कासमुचित मात्रा में योग मानते हैं। ये सभी तत्त्व प्रकृति में भी विद्यमान है। प्रकारान्तर से हमें प्राप्त करना होता है। जिनमें वनस्पति एवं जन्तु जीवजगत् से सम्बन्धित हैं। 'यत् पिण्डे तत्

---

[2]शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्।
[3]यौवनं जरया व्याप्तं शरीरं व्याधि मन्दिरम्। 3/3 (सहजानन्दति)
[4]युक्ताहारविहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु।
[5]आरोग्यं भोजनाधीनम् 5/9 काश्यपसंहिता।
[6]क्षितिजल पावक गगन समीरा ।

©Indira Gandhi National Open University

ब्रह्माण्डे' के सिद्धान्त के अनुरूप व्यक्ति या जीव प्रकृति से उद्भूत है इसलिए उन्हें स्वस्थ रहने के लिए प्रकृति का सान्निध्य जरूरी है। हमारे शरीर में पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश एवं वायु तत्व का उचित मात्रा में होना आवश्यक है। इनके कार्य एवंप्राप्ति के स्रोत इस प्रकार हैं–

तालिका-1

क्र.सं.	पञ्चमहाभूत	गुण	इन्द्रिय	प्रधानता	लक्षण
1.	क्षिति (पृथिवी)	गंध	नासिका	तम	द्रव्यमान, नीरसता, स्थिरता
2.	जल (आप)	आस्वाद्	जिह्वा	सत्व एवं तम	शीतलता, मृदुलता, तैल्यता, रस एवं संवेदना
3.	पावक (अग्नि)	दृष्टि	आँख	सत्व एवं रज	प्रकाश, पाचन संबद्ध तत्व
4.	गगन (आकाश)	ध्वनि	कान	सत्व	सूक्ष्मता, विशिष्टता, अपरिमेयता
5.	समीर (वायु)	स्पर्श	त्वचा	रज	स्थूलता, आकृति निर्धारण, आवेश, संवेदनशीलता ज्ञा. गति।

महाभूतानि खं वायुराग्निरापः क्षितिस्तथा।
शद्वः स्पर्शश्च रूपं च रसो गंधश्च तद्गुणाः।। शरीर स्थान - 1/27

उक्त तालिका में हमारे स्थूल शरीर को क्रियाशील एवं स्वस्थ रखने के लिए उक्त तत्वों की आवश्यकता होती है। इनके रासायनिक, जीवशास्त्रीय एवं चिकित्सा शास्त्रीय पृथक् परिप्रेक्ष्य हैं। फिर भी सभी संतुलित एवं पौष्टिक आहार की संस्तुति करते हैं। व्यक्ति की अवस्था, लिंग एवं क्षेत्र के आधार पर आहार के प्रकार एवं मात्रा निर्धारित की जाती है। एक सामान्य एवं स्वस्थ व्यक्ति को प्रत्येक दिन 3000 कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता होती है। जिसके लिए विभिन्न स्रोत एवं पोषक तत्वों के प्रकार निम्नलिखित सारिणी में दिये गये हैं-

तालिका-2

खाद्यपदार्थ	**मात्रा (ग्राम में)**	**कैलरी स्रोत**	**ग्राम में**
अनाज	400	प्रोटीन	90 ग्राम
दालें और सूखे मेवे	85	कार्बोहाइड्रेट	450 ग्राम
हरी पत्तेदार	114	वसा	90 ग्राम

©Indira Gandhi National Open University

सब्जियाँ			
अन्य सब्जियाँ	85	कैल्शियम	104 ग्राम
तेल, वनस्पति घी	57	फास्फोरस	20 ग्राम
दूध और दूध से बने पदार्थ	284	लोहा	217 मि.ग्राम
चीनी व गुड़	57	विटामिन ए	8400 अ.रा.इ
मांस, मछली व अण्डा	125	बी 1 बी2 सी	2.1 मि. ग्राम 1.8 मि. ग्राम 280 ग्राम
फल	85	निकोटिनिक अम्ल	22 ग्राम

गृह विज्ञान-प्रतियोगिता साहित्य – आगरा से साभार

तालिका-3

षडस एवं पञ्चमहाभूत

क्र.सं.	**रस (स्वाद)**	**महाभूत (पञ्चतत्त्व)**
1.	मधुर (माठा)	पृथिवी और जल (आप)
2.	अम्ल (खट्टा)	पृथिवी और अग्नि (तेज)
3.	लवण (नमकीन)	जल और अग्नि
4.	तिक्त	आकाश और वायु
5.	कटु	अग्नि और वायु
6.	कषाय	पृथिवी और वायु

उक्त सारिणी में सिर्फ हमारे भोजन में विभिन्न प्रकार के स्रोतों की मात्राएँ एवं रासायनिक तत्त्वों की मात्राएँ प्रदर्शित हैं। ये विभिन्न तत्त्व हमें विभिन्न प्रकार के अनाजों, फलों, सब्जियों आदि से प्राप्त होते हैं। आयुर्वेद में भोजन (आहार) को रसों (स्वाद) के आधार पर छः वर्गों में विभक्त किया गया है- मधुर, अम्ल, लवण, तिक्त[7] कटु और कषाय ये सभी पञ्चमहाभूतों से सम्बन्धित है जिसे तालिका-3 में देखा जा सकता है। इन रसों से परिपूर्ण आहार का उचित मात्राएँ, ऋतु एवं अवस्था के अनुसार सेवन करने से वह त्रिदोषों (कफ, पित्त और वात) को नियन्त्रित कर व्यक्ति को दीर्घायु प्रदान करता है जबकि मात्रा दोष व्यक्ति को बीमार बनाता है। अतः व्यक्ति को शास्त्र एवं लोक सम्मत आहार को ग्रहण करने की सलाह दी जाती है जिससे वे रोग को पास आने ही न दें। कहा भी गया है –Prevention is

[7]रसाः स्वाद्वम्ललवणतिक्तोष्ण कषायकाः। षड्द्रव्यमाश्रितास्ते च यथा पूर्वं बसवहाः।।।1/14-15

©Indira Gandhi National Open University

better than cure।'पथ्ये असथि गदस्थस्च किमौषदा निशेवनम्'जो इन्द्रिय संयम द्वारा सम्भव है।

श्रीमद्भगवद्गीता में स्पष्ट निर्देश है कि इन्द्रिय संयम कर[8]पापाचारी काम का परित्याग करना चाहिए क्योंकि यह ज्ञान और विज्ञान को नाश करने वाला होने से आत्मावबोध में बाधक होता है। तुलसीदास जी ने हनुमान जी को बुद्धिमानों में श्रेष्ठ इसलिए कहा है क्योंकि वे जितेन्द्रिय[9] हैं। इन्द्रिय जय से अभिप्राय मन पर नियन्त्रण करना। क्योंकि मन इन्द्रिय के साथ मिलकर अच्छे और बुरे कर्मों की ओर प्रवृत्त करता है। इसलिए मन को वश में करने की बात कहते हैं[10] जिससे आत्मबोध हो सके। उपनिषद् में मन को लगाम कहा गया है जिसे बुद्धि द्वारा वश में करने की बात कही गई है।[11] जबकि गीता में इसे वैराग्य और अभ्यास द्वारा वश में करने की बात कही गयी है। मन का सम्बन्ध अन्न से होता है। उक्ति भी प्रसिद्ध है- जैसा खाओगे अन्न, वैसा बनेगा मन। इसलिए आहार शुद्धि की बात कही जाती है।

गीता में गुण के आधार पर आहार को तीन वर्गों में विभक्त किया गया है। इस बात को स्थापित करने से पूर्व भूमिका बनाते हुए 6ठे अध्याय में 'युक्ताहार विहारस्य .....[12]' के माध्यम से कहा गया है। जिसके अनुपालन से व्यक्ति दुःख से दूर रह सकता है। क्योंकि इस प्रकृति अर्थात् जगत् में सत्त्व, रज और तम तीनों ही गुणों का समन्वय है। जहाँ सत्त्व का सम्बन्ध निर्मल प्रकाशमय ज्ञान से, रज का राग,तृष्णा और कर्म से एवंतम का अज्ञान, मोह, प्रमाद, आलस, निद्रा से बताया गया है। जो क्रमशः सत्व-सुख, रज-कर्म तथा तम-प्रमाद के द्योतक होते हैं।[13] इस प्रकार अध्याय 14 में तीनों ही गुणों के लक्षण और प्रभाव को स्पष्ट करने के बाद अध्याय 17 में व्यक्ति को श्रद्धाआदि गुणों के आधार पर तीन प्रकार बताते हुए उनके रूचि व प्रतीक स्वरूप आहार को वर्गीकृत किया गया है। जो व्यक्ति के लिए आत्मज्ञान सुख, दु:ख आदि के कारण स्वरूप होते हैं। प्रायः लोक में आहार ग्रहण करने के आधार पर ही व्यक्ति को भी वर्गीकृत किया जाता हुआ देखा जाता है। व्यक्ति का आहार ही उसके शरीर सौष्ठव के द्योतक माने जाते हैं।"आचारः कुलमाख्याति---[14]'आहारे व्यवहारेच.....'[15] इत्यादि। अतः

[8]तस्मातवमिद्रियाण्यादौनियम्य भरतर्षभः ।। 3/41।।गीता।।
[9]मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
[10]मनोदुर्निग्रहं चलम्।। अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।। 6/35।।गीता।।
[11]कठोपनिषद् 1/3/3-6
[12]गीता 6/17
[13]सत्वं सुखे सञ्जयति रजः करमणि भारत। ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत:||14/9
[14]सुभाषित-1 www.jagaran.com
[15]चाणक्यनीति-12/21. openpathhulu.com

©Indira Gandhi National Open University

आहार ही व्यक्ति के शारीरिक-मानसिक-बौद्धिक तथा आत्मिक सुख और दुःख के प्रति कारण होता है। इसीलिए श्रीमद् भगवद् गीता में प्रदत्त आहार के प्रकार का ज्ञान हम मानव मात्र के लिए कल्याणकारी है। जिसका विवरण इस प्रकार है -

आहार के प्रकार

भोजन करने वाले सभी मनुष्यों को तीन प्रकार के भोजन प्रिय अर्थात् रुचिकर होते हैं।[16]जो उनके स्वभाव को प्रकट करने में सहायक होते हैं। या यूँ कहें कि जो जिस प्रकार का आहार ग्रहण करता है उसका स्वभावअथवा रूचि या प्रवृति उसी प्रकार की हो जाती है।क्योंकि मन पर अन्न का प्रभाव प्रसिद्ध रूपसे सुना जाता है। इस विषय में उपनिषद् वाक्य भी प्रमाण है-"आहार शुद्धौ सत्वशुद्धिः। सत्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः। स्मृति लब्ध्वा सर्व ग्रन्थिनां विमोक्षः।।[17]अर्थात् शुद्ध आहार से सत्व की शुद्धि जिससे स्मृति (ज्ञानशक्ति) की प्राप्ति होती है जो सभी प्रकार के बन्धनों को काटकर जीव को मुक्तकरताहै। अत: आहार केभेद जानना आवश्यक है जिन में सर्वप्रथम सात्विक आहार की बात कही गयी है –

1. सात्विक आहार

वैसे गुण वाले भोज्य जो रस्य (रसयुक्त), स्निग्ध (चिकने), स्थिर (शरीर में साररूप में बहुत समय तक रहने वाले) और ह्यद्य (हृदय को प्रिय लगने वाले) आहार सात्विक माने जाते हैं। जो व्यक्ति में आयु-बुद्धि, बल, आरोग्यता, सुख और प्रीति को बढ़ाता है।"[18] आयुर्वेद में सत्वगुण को वात, पित्त और कफ तीनों दोषों के संतुलन से सम्बंधित माना जाता है। जब सत्वगुण प्रबल होता है तो व्यक्ति शान्त, ज्ञानी और स्वस्थ होता है। इसी कारण से आध्यात्मिक व्यक्ति प्रायः सात्विक आहार ग्रहण करते हैं। सात्विक आहार के मुख्य स्रोत –ताजेफल, सब्जियाँ, साबुत अनाज, दालें एवं फलियाँ, मेवे एवं बीज, दूध एवं डेयरी उत्पाद, शहद तथा हर्बल चाय इत्यादि हैं।

2. राजसिक आहार

---

[16]आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः 17/7 गीता

[17]छान्दोग्योपनिषद् - 7/26/2

[18]आयु:सत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः। रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः।। 17/8। गीता

©Indira Gandhi National Open University

वे आहार जिसमें रजोगुणवर्धक तत्त्व विद्यमानहोते हैं उसे राजसिक आहार कहा जाता है। इस प्रकार के आहार ग्रहण करने से व्यक्ति में दुःख, शोक एवं रोग उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार के आहारका लक्षण है– वह अति कड़वे, अति खट्टे, अति लवणयुक्त (नमकीन), अति उष्ण, तीक्ष्ण, रूखे तथा दाहकारक होते हैं।[19] आयुर्वेद के अनुसार ऐसे आहार रजो गुण अर्थात् पित्तदोषवर्धक होते है इसीलिए इस प्रकार के आहार ग्रहण करनेसे बचने की सलाह दी जाती है। इसप्रकार के भोज्य व्यक्ति में लालसा, क्रियाशीलता एवं उत्तेजना से सम्बन्धित होने के कारण उन्हें महत्त्वाकांक्षी, उत्साही तथा बेचैन बनाने में सहायक हो सकता है। उदाहरण -मछली, अंडे, चिकन, सभी साबुत दालें (बिना अंकुरित) गरम मसाले जैसे मिर्च, काली मिर्च, बैंगन, प्याज, लहसुन, मूली, चाय, कॉफी, वतित पेय, चॉकलेट आदि।

3. तामसिक आहार

तामसिक आहार शरीर और मन को सुस्त और आलसी बनाता है। इस प्रकार के भोजन- (यातयाम (अधपका), गतरस (रस रहित), पूति (दुर्गन्धयुक्त) और बासी (जिसको पके हुए एक रात बीत गयी हो) तथा उच्छिष्ट (खाने के पश्चात् बचा हुआ) शरीर के लिए हानिकारक होता है।[20] इस प्रकार के आहार के अधिक सेवन से व्यक्ति में नकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है और व्यक्ति को आलसी, निद्रालु और अधिक क्रोधी बनाता है यह शरीर में विषाक्त पदार्थों को बढ़ाता है जो मानसिक अस्वस्थता का कारण बनता है। इसीलिए तामसिक आहार से बचने की सलाह दी जाती है। उदाहरण – फास्ट फूड, तले हुए खाद्य पदार्थ, जमे हुए खाद्य पदार्थ, Microwave में पकाए गए खाद्य पदार्थ और प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ, बासी भोजन, शराब, ड्रग्स रसायन, मशरूम, लाल-माँस, बीफ Sauces etc.

उक्त तीन प्रकार के आहार का वर्गीकरण व्यक्ति की रुचि तथा उनमें तत्-तत गुणों की अधिकता के आधार पर किया गया है। आध्यात्मिक उन्नति अर्थात् सत् - चित् तथा आनन्द की प्राप्ति अथवा इष्ट सिद्धिहेतु सात्विकी, राजसी एवं तामसी आहारों में सात्विकको सर्वश्रेष्ठ बताया गया है जो आयुर्वेद के अनुरूप वात-पित्त और कफ को संतुलित रखते हुए सत्व बुद्धि की उन्नति में सहायक माना जाता है। इसके अतिरिक्त आहार को बनाने (तैयार करने) के आधार पर अन्य चार प्रकारों में बाँटे गये हैं-<u>अशितम्</u> चबाकर खाया जाने

---

[19]कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः | आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः 17/9 भगीता

[20]यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम्17/10 भगीता

©Indira Gandhi National Open University

वाला आहार, खातिम्-चूसकर खाये जाने योग्य आहार, पीतम्- पीकर ग्रहण किये जाने योग्य एवं लीढ़म-चाटने योग्य आहार। इन सभी का उपयोग आवश्यकता व इच्छा के अनुरूप किया जाता है। जिससे शरीर को ऊर्जा मिलती है। उक्त सभी प्रकार के आहार का सेवन उचित मात्रा और नियत समय पर करना चाहिए। कहा भी गया है-

"हिताशी स्यान्मिताशी स्यात्कालभोजी जितेन्द्रियः।
पश्यन् रोगान् बहून् कष्टान् बुद्धिमान् विषमाशनात्।

आहार की मात्रा

प्रश्न उठता है कि क्या? कब? और कितना खाना चाहिए? तो इसके लिए प्रसिद्ध वाक्य हैं-'हित भुक', 'मितभुक् ऋतुभुक'[21] अर्थात् जिसके सेवन से स्वास्थ्य की रक्षा हो, मात्रा अल्प तथा ऋतु के अनुरूप प्राप्त होने वाले आहार का सेवन करना चाहिए। इस सन्दर्भ में एक मैथिली कथन है- 'जुडब, रूचब और पचब' अर्थात् प्राप्त होना, रुचिहोना तथा सुपाच्य होना आहार ग्रहण से पूर्व विचारने योग्य बातें हैं।हठयोग प्रदीपिका में भी अत्याहार[22] को दोष बताया गया है। अन्य सुभाषित अल्पाहारी गृहत्यागी[23]भी आहार की मात्रा को दर्शाया गया है। अष्टांग योग सूत्र में आहार की मात्रा विषयक उपदेश इस प्रकार है-

मात्राषी सर्वकालस्यान्मात्राह्यग्नेः प्रवर्तिकाः।
मात्रा द्रव्याण्यपेक्षन्ते गुरूण्यपि लघून्यपि।।8/1।

अर्थात् आहार की मात्रा ही द्रव्यों और जठराग्नि को बढ़ातीघटाती है। वहीं स्मृतिकार आचार्य मनु ने आहार की अतिमात्रा को स्वास्थ्य,आयु, स्वर्ग, पुण्य तथा मित्रता के विपरीत बताया हैं इसीलिए अत्याहार से बचने की बात[24] कही गयी है। वहीं सुमन वाटिका में अल्पाहार तथाअत्याहार के गुणदोषों को बताते हुए कहते हैं –

मिताहारो नरः सोढुं शक्तः कष्ट-शतं सुखम्।
अन्यभ्यतो हि कष्टानामध्यशनो विपद्यते।।

---

[21]तच्च नित्यं प्रयुञ्जीत स्वास्थ्यं येनानुवर्तते। अजातानां विकाराणामनुत्पत्तिकरं च यत्।
अल्पादाने गुरूणां च लघूनामतिसेवने। मात्रा कारणमुद्दिष्टं गुरु लाघवे।।
तस्याशिताद्याहारात बलवर्णज्च वर्धते। तस्युर्तसात्स्यं विदितं चेष्टाहार विपाश्रम्।। च.स.सू 6/3

[22]अत्याहारः प्रयासश्च प्रजल्पो नियमाग्रहः। जनसङ्गश्च लौल्यं च षड्भिर्योगो विनश्यति।। हठयोग-उ. 1/15

[23]अल्पाहारी ..... पञ्चलक्षणम्।।

[24]अनारोग्यमनायुज्यमस्वर्म्य चाति भोजनम्।अपुण्यं लोक विद्विष्टं तस्माततत्यपरि वर्णयेत।। मनु. 2/57।

©Indira Gandhi National Open University

अर्थात् अल्पाहारी व्यक्ति सौ कष्टों को भी सहन कर लेता है और अत्याहारी विपत्ति को प्राप्त करता है। वहीं चरक संहिता की व्याख्या से आहार की मात्रा के विषय में एक पद्य उद्धृतत है-

भोजनं प्राणरक्षार्थं विद्यते नात्र संशयः ।
अधिकंहानये तस्मात्युक्ताहार परोभवेत[25]

अर्थात् आहार निः सन्देह प्राण रक्षा के लिए होता है अधिक आहार स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। अतः व्यक्ति को आहार की मात्रा पर बल देते हुए श्रीमद्भगवद्गीता के चतुर्थ अध्याय में 'नियताहाराः'[26]छठे में 'युक्ताहार' तथा अठारहवें अध्याय में 'लघ्वाशी'[27] शद्व का प्रयोग किया गया है। इसप्रकार आहार की मात्रा, समय तथा संतुलन पर भी निर्देश प्रदान किया गया है। गीता न सिर्फ धार्मिक, ऐतिहासिक, दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, प्रबन्धकीय ग्रन्थ है अपितु व्यक्ति के सुस्थिर विकास एवं आत्मप्रबंध में आहारप्रबन्ध (योगशास्त्र के अन्तर्गत आयुर्वेदिक तत्वों) का भी महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ को जो व्यक्ति जिस भाव से और जितने बार अध्ययन करते हैं उन्हें उन्हीं व नये तत्वों का दर्शन होता है। इसलिए गीता का अध्ययन अपनीआवश्यकता अनुसार कर के लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा'[28] अर्थात् त्याग के साथ आहार ग्रहण करने का निर्देश प्राप्त होता है। 'सह नौ भुनक्तु'[29] साथ-साथ अर्थात् मिल-जुल कर, परस्पर प्रेम से आहार ग्रहण करने का निर्देश प्राप्त होता है। आयुर्वेद के विभिन्न ग्रन्थों में उपयुक्त स्वास्थ्यवर्धक, उचित मात्रा में ऋतुसापेक्ष्य आहारग्रहण करने का निर्देश प्राप्त होता है। इस प्रकारश्रीमद्भगवद्गीता में 'युक्ताहार' अर्थात् उपयुक्त आहार करने वाले का सभी प्रकार का कष्ट दूर होने की बात कहीं गयी है। काश्यप संहिता में भी यह निर्देश प्राप्त होता है 'आरोग्यं भोजनाधीनम्' ।जो युक्ताहार की पुष्टि करता है। गीता में सत्व, रज और तम इन तीन गुणों के समन्वय को प्रकृति अर्थात् सृष्टि माना गया है। इस आधार पर कर्म, यज्ञ, व्यक्ति (कर्ता - भोक्ता), श्रद्धा, दान, ध्यान, ज्ञान, आदि सभी को तीन प्रकारों में विभक्त किया गया है। अतः आहार को भी तीन वर्गो में विभक्त किया गया है- सात्विक आहार, राजसिक आहार और तामसिक आहार। इनके धर्म और प्रतिफलों को

---

[25]भास्वती प्रथमोभागः – पृ.25
[26]अपरे नियताहाराः प्राणान्प्राणेषु जुह्वति। 4/30।
[27]विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानसः । 18/52।
[28]ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्। इशो.
[29]सहनाववतु सहनौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै तेजस्विनावधीतमस्तु माविद्विषावहै। कठोप.

©Indira Gandhi National Open University

भी बताया गया है। अन्त में सात्विक आहार- 'पत्रं पुष्पं फलं तोयम्' जो सर्वत्र प्राप्त एवं सर्वग्राह्य होने पर भीलघ्वाशीकहकर अल्पमात्रा में ग्रहण करने वालों का मन, बुद्धि और आत्मज्ञान में सहायक होने से कल्याणकारी बताया गया है। जिससे सभी का जीवन, आनन्दमय हो तथा स्वस्थ, सुन्दर एवं राष्ट्र एवं विश्व कल्याण में अपना सर्वोत्तम योगदान कर सके। सर्वे सन्तु निरामयाः।।

1. ईशादि नौ उपनिषद् – गीता प्रेस गोरखपुर।
2. ऋतिका प्रथम भागः सी.बी.एस.ई. कक्षा 11, केन्द्रियपाठ्यक्रम
3. गृहविज्ञान- प्रतियोगिता साहित्य – आगरा।
4. भास्वती प्रथमो भागः एन.सी.ई.आर.टी. – कक्षा 11
5. शोधप्रभा- जुलाई-सितम्बर- 2023- श्री ला.ब.शा.रा.सं.वि.वि.
6. उत्कर्ष विशेषाङ्क - जुलाई-सितम्बर- 2024- श्री ला.ब.शा.रा.सं.वि.वि.
7. श्रीमद्भगवद्गीता – शांकरभाष्य हिन्दी अनुवाद सहित – गीता प्रेस, गोरखपुर
8. श्रीमद्भगवद्गीता – भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, जुहू – मुम्बई
9. सहजानन्दगीता –exoticaindiant.com
10. Journal of Ayurveda and Integrated Medical Sciences. Vol. 8, No-5 (2023)
11. स्वस्थ चिन्तन द्रष्ट्या गीतोक्त आहार का विश्लेषणात्मक अध्ययन

©Indira Gandhi National Open University